शिक्षा को सब्सिडी तो देनी ही होगी

देश के तमाम सरकारी विश्वविद्यालयों की स्थिति चिंताजनक है, क्योंकि राजनीतिक रूप से शिक्षा सरकारों की प्राथमिकता में नहीं है।

हरिवंश चतुर्वेदी
निदेशक, बिमटेक

राजधानी के जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय प्रबंधन द्वारा हॉस्टल फीस में की गई वृद्धि के खिलाफ छात्र-संघ का आंदोलन जारी है। मानव संसाधन मंत्रालय ने तीन सदस्यीय एक समिति के गठन की घोषणा की है, जो विद्यार्थियों और अन्य पक्षों से बातचीत करके इस समस्या का समाधान ढूंढ़ने की कोशिश करेगी। इस प्रसंग में यह सवाल उठना जरूरी होगा कि क्या विश्वविद्यालय प्रबंधन को 19 साल बाद फीस बढ़ाने का अहम फैसला करने से पहले छात्रों व शिक्षकों से बातचीत और सलाह-मशविरा नहीं करना चाहिए था? फीस ही क्यों, क्या विश्वविद्यालयों में निरंतर संवाद और पारस्परिक सहमति द्वारा हर छोटी-बड़ी समस्या का समाधान नहीं ढूंढ़ा जाना चाहिए? क्या संवादहीनता की इस दीवार को ढहाए बिना जेएनयू जैसे राष्ट्रीय विश्वविद्यालय सुचारू रूप से चलाए जा सकते हैं?

देश में 43 केंद्रीय विश्वविद्यालयों को केंद्र सरकार के मानव संसाधन विकास मंत्रालय द्वारा वित्तीय सहायता दी जाती है और उनके कुलपतियों की जवाबदेही सीधे भारत सरकार और महामहिम राष्ट्रपति के प्रति होती है, जो इन विश्वविद्यालयों के विजिटर होते हैं। इन विश्वविद्यालयों में होने वाली कोई भी घटना या आंदोलन तुरंत राष्ट्रीय विमर्श का मुद्दा बनता है, क्योंकि अपनी ऐतिहासिक विरासत, राजनीतिकरण और अकादमिक विशिष्टता के कारण ये देश के शीर्ष विश्वविद्यालय माने जाते हैं।

चित्रांकन : डी. श्रीनिवास

जेएनयू को देश की आजादी के बाद स्थापित नए विश्वविद्यालयों में एक प्रमुख विश्वविद्यालय माना जाता है। दक्षिण दिल्ली की अरावली पर्वत श्रृंखला में एक हजार एकड़ में फैले इस केंद्रीय विश्वविद्यालय में लगभग नौ हजार विद्यार्थी और 650 प्रोफेसर हैं। पीएचडी करने वाले छात्रों की संख्या ही पांच हजार से अधिक है। पिछले 50 वर्षों में जेएनयू ने देश की उच्च शिक्षा, सरकार और समाज में अपनी खास जगह बनाई है, जो मुख्य रूप से इसकी शोधपरकता और उच्च शैक्षणिक वातावरण का परिणाम है। इस छवि के निर्माण में जेएनयू की फैकल्टी और एलुमनाई का बड़ा योगदान है। जेएनयू की एलुमनाई देश भर में और विश्व स्तर पर अपने शोध कार्यों एवं सामाजिक सरोकार के लिए जानी जाती है। केंद्र सरकार और राज्य सरकारों के अनेक मंत्री जेएनयू के पूर्व छात्र रहे हैं। मोदी सरकार में वित्त मंत्री निर्मला सीतारमन और विदेश मंत्री एस जयशंकर इसके छात्र रह चुके हैं। हाल ही में अर्थशास्त्र के नोबेल पुरस्कार विजेता प्रोफेसर अभिजीत बनर्जी (एमआईटी यूनिवर्सिटी) भी जेएनयू में पढ़ाई कर चुके हैं।

भारत में स्कूलों, कॉलेजों और विश्वविद्यालयों में फीस-निर्धारण का मामला बेहद पेचीदा है। इस बारे में राष्ट्रीय और राज्य स्तर पर अलग-अलग नीतियां व कानून बनाए गए हैं। ज्यादातर केंद्रीय विश्वविद्यालय आधुनिक भारत के निर्माण के लिए जरूरी मानव संसाधन, जैसे वैज्ञानिक, समाज वैज्ञानिक, प्राध्यापक, प्रशासक और बुद्धिजीवी तैयार करने के लिए बनाए गए थे। कई केंद्रीय व राज्य विश्वविद्यालयों का जन्म स्वाधीनता आंदोलन को समर्थन देने के लिए हुआ था।

जेएनयू ने शुरू से यह कोशिश की है कि देश के पिछड़े क्षेत्रों और वंचित वर्गों के युवाओं को उच्च-गुणवत्ता की शिक्षा के समुचित अवसर मुहैया कराए जाएं। यूं तो इस विश्वविद्यालय में भी सभी विश्वविद्यालयों की तरह भारतीय संविधान में दिए गए प्रावधानों के अनुरूप अनुसूचित जातियों, जनजातियों और अन्य पिछड़े वर्गों तथा आर्थिक रूप से विपन्न परिवारों के युवाओं के लिए आरक्षण की व्यवस्थाएं हैं, किंतु इसकी प्रवेश नीति में सामाजिक, सांस्कृतिक व भौगोलिक रूप से पिछड़े क्षेत्रों और गरीब परिवारों के नौजवानों के लिए कुछ विशिष्ट प्रावधान भी हैं। अनुमान है कि जेएनयू के 45 प्रतिशत छात्र-छात्राएं पिछड़े क्षेत्रों और विपन्न परिवारों से आते हैं। कई समाज विज्ञानियों और शिक्षाविदों ने समय-समय पर इस विश्वविद्यालय की प्रवेश प्रक्रिया की सराहना भी की है, जो सामाजिक विविधता पर आधारित है। इसी का नतीजा है कि जेएनयू में शुरू से ही ट्यूशन फीस और हॉस्टल फीस बहुत कम रही है।

जेएनयू में फीस वृद्धि के खिलाफ फूटे छात्र-आंदोलन का प्रमुख कारण एक तरफ विश्वविद्यालय में प्रशासन और छात्रों के बीच पिछले कुछ वर्षों से चल रही संवादहीनता की स्थिति है, जिसके स्पष्ट रूप से राजनीतिक कारण हैं। दूसरी ओर, किसी भी कॉलेज या यूनिवर्सिटी में हॉस्टल कमरे के किराये में एकमुश्त 30 गुना वृद्धि करना उचित नहीं ठहराया जा सकता। किराये में वृद्धि के साथ-साथ हर विद्यार्थी से बिजली-पानी और सफाई के लिए 1,700 रुपये की मासिक सेवा शुल्क भी अतिरिक्त रूप से लगाया गया है, जो आमतौर पर कमरे के किराये का ही भाग होता है।

जेएनयू छात्र-संघ द्वारा फीस वृद्धि के खिलाफ चलाए जा रहे आंदोलन पर कुछ सवाल भी उठ रहे हैं। कुछ टीवी चैनल, जो आमतौर पर जेएनयू से जुड़े किसी भी प्रकरण पर तुरंत सक्रिय हो जाते हैं, इस बार भी कुछ मुद्दों को बार-बार उछाल रहे हैं। इनमें एक मुद्दा है कि केंद्र सरकार पहले से ही जेएनयू के छात्रों की पढ़ाई पर बहुत ज्यादा खर्च कर रही है, जो एक तरह से इसके छात्रों को राजनीति करने के लिए सब्सिडी देने जैसा है। बताया जाता है कि जेएनयू पर मानव संसाधन विकास मंत्रालय द्वारा हर साल करीब 518 करोड़ रुपये खर्च किया जाता है, जबकि ट्यूशन फीस आदि से सिर्फ सात करोड़ रुपये की राशि जुट पाती है। यह कुल खर्चे का सिर्फ 1.4 प्रतिशत है। पर क्या सभी केंद्रीय विश्वविद्यालय इसी ढंग पर नहीं चलाए जा रहे हैं? दिल्ली विश्वविद्यालय पर प्रतिवर्ष 2,352 करोड़ रुपये का खर्चा होता है, जबकि सालाना फीस से सिर्फ 103 करोड़ रुपये आते हैं, जो इसके कुल खर्चे का 4.4 प्रतिशत है। बीएचयू पर सालाना 1,070 करोड़ रुपये का खर्च आता है, जबकि फीस से सिर्फ 52 करोड़ रुपये मिलते हैं, जो कुल खर्चे का 4.9 प्रतिशत है।

प्रस्तावित राष्ट्रीय शिक्षा नीति के प्रारूप में 25 प्रतिशत गरीब छात्रों को निःशुल्क शिक्षा और 25 प्रतिशत कमजोर तबके के छात्रों को 30 से 70 प्रतिशत तक शुल्क मुक्ति देने की सिफारिश की गई है। अभी इस प्रारूप को केंद्र सरकार द्वारा स्वीकार किया जाना शेष है, तभी यह स्पष्ट होगा कि भविष्य में उच्च शिक्षा के क्षेत्र में फीस निर्धारण का क्या फॉर्मूला होगा? फिलहाल देश की तमाम सरकारी यूनिवर्सिटी में आर्थिक स्थिति चिंताजनक है, क्योंकि केंद्र और राज्य सरकारों की उच्च प्राथमिकता में ऐसी तमाम योजनाएं हैं, जो राजनीतिक रूप से फलदायक हैं और शिक्षा फिलहाल उस सूची में नहीं आती।

यह सच है कि भारत में उच्च शिक्षा फिलहाल बिना सरकारी सब्सिडी के नहीं चल सकती! जिस पृष्ठभूमि के परिवारों के बच्चे इन विश्वविद्यालयों में आते हैं, उनसे अधिक फीस वसूलना मुश्किल होगा।

(ये लेखक के अपने विचार हैं)

नजरिया